प्रस्तावना.

अपने अंतीम तीर्थंकर श्रीमहावीरस्वामीके निर्वाणगमनका उत्तम दिन 'दिवाली' (दीपावली) के नामसे सर्वत्र प्रसिद्ध है और महावीरनिर्वाणस्मृतिके लिये उसीदीन प्रत्येक मंदिरजीमें 'संक्षिप्त महावीर चरित्र' सब भाइओंको सुनाकर निर्वाणकांड भाषा--गाथा पढ़कर महावीर जिनपूजा करना अत्यावश्यक है. परंतु पुस्तक न होनेसे याती प्रमादके वशसे सब जगह इस पर्व अच्छी तरहसे नहि मनाया जाता. इस लिये एक ऐसी पुस्तक की बड़ी आवश्यकता थी कि जिसमें 'श्रीमहावीर चरित्र' संक्षेप रूपमें हो और उसके साथ २ महावीर जिनपूजा और निर्वाण-कांडभी सामिल किया गया हो. इस अभिप्रायसे गत वर्षमें काशी निवासी पं. गजाधरलाल जैन शास्त्रीद्वारा लिखवाकर पं. पन्नालाल बाकलीवालने 'महावीरस्वामी और दिवाली' नामकी छोटीसी पुस्तक प्रकट कीथी उसके आधारसे तैयार करके उसमें निर्वाणकांड भाषा--गाथा और महावीर जिन पूजा सामिल करके 'श्रीमहावीर चरित्र' नामकी इस पुस्तक प्रकट की जाती है और वडोदा [वडोदरा] निवासी शा केशवलाल त्रीभोवनदासकी प्रेरणासे उनकी मासो शीवकोरबाइके खर्चसे 'दिगंबर जैन' के ग्राहकोंको उपहार में दी जाती है. जो सब भाइओंको दिवालीके दिन निर्वाणपूजनके समय पढ़नेके लिये बहुत रुचीकर होगी. इत्यलम्.

वीरनिर्वाण संवत २४३९ | जैन जाति सेवक

अश्विन वदी ७ | मूलचंद किसनदास कापड़िआ

ता. २९--९--१३ | ऑ. संपादक. 'दिगंबर जैन'-सुरत.

॥ श्री परमात्मने नमः ।

दिवाली में निर्वाण पूजन के समय

श्री महावीर चरित्र.

जन्मस्थान ।

श्रीमहावीरस्वामी जैनियोंके परमपूजनीय परमात्मस्वरूप चौवीस तीर्थंकरोंमेंसे अंतके चौवीसवें तीर्थंकर हैं । इनके वीर, महावीर, अतिवीर, सन्मति, वर्द्धमानभगवान आदि अनेक नाम हैं परंतु विशेषकर महावीरस्वामीके नामसे ही अधिक प्रसिद्ध हैं ।

इन महात्माका जन्म आजसे २५११ वर्ष पहिले (इस्वी सनसे ५९९ वर्ष पहिले) इसी आर्यक्षेत्रमें कुंडलपुर नगरके अधिपति नाथवंशीय काश्यपगोत्री सिद्धार्थ महाराजकी त्रिशलादेवी राणीके गर्भसे हुआ था। कुंडलपुरशहर महावीर भगवान्के समयमें ४८ कोशकी लंबाई चौडाईमें बसता था। आजकल उस शहरका कुछ भी पता नहीं है, परंतु ऐतिहासिक विद्वानोंने विहारसे ७ मीलकी दूरी पर एक कुंडलपुर बस्ती प्रसिद्ध किया है। जैनी लोग भी उस जगहको महावीरस्वामीका जन्मस्थान मानकर उस पवित्रभूमिकी बहुत कालसे यात्रा करते हैं और पूजनादि कर पुण्योपार्जन करते रहते हैं।

गर्भकल्याण ।-

सब तीर्थंकर भगवान प्रायः १६ स्वर्ग, ९ ग्रैवेयक, पांच पंचोत्तर [विजय वैजयंत, जयंत, अपराजित और सर्वार्थसिद्धि] आदि स्थानोंसे आकर किसी न किसी उत्तम राजकुलमें जन्मधारण करते हैं। अंतिम तीर्थंकर श्रीमहावीरस्वामी अच्युत नामके सोलहवें स्वर्गमें २२ सागरपर्यंत अपारसुख भोगकर आषाढसुदी ६ के दिन सिद्धार्थ महाराजकी पटरानी त्रिशलादेवीके गर्भमें आये थे। तीर्थंकर भगवान जब मनुष्यभवमें अवतरण करते हैं तब सौधर्मनामक प्रथमस्वर्गके इंद्रको अवधिज्ञानके प्रभावसे ६ महीने पहिले ही मालूम हो जाता है। सो इंद्र कुबेरको हुकुम देता है कि अमुक नगरके अमुक राजाकी राणीके गर्भमें तीर्थंकर भगवान् पधारेंगे, सो उस नगरको १२ योजनमें सुंदर रचना करो और राजाके घर दिनमें तीन वार लगातार ६ महीने पहिलेसे अर्थात् १५ महीने तक रत्नवृष्टि करते रहो। कुबेर इंद्रकी आज्ञानुसार ऐसा ही किया करता है। महावीरस्वामीके पिता सिद्धार्थराजाके घर पर भी १५ महीने तक कुबेरने रत्नवृष्टि की और नगर भी १२ योजनमें सुंदर रचनासे सुशोभित कर दिया।

जिस रात्रिको महावीरस्वामी अच्युतस्वर्गसे चयकर माताके गर्भमें आये थे उस रात्रिमें माताको १६ शुभस्वप्न आये और माता प्रातःकाल ही उठकर महाराजके समीप सब स्वप्न

निवेदन करके महाराजसे उनका फल सुननेकी इच्छा प्रगट की। महाराजने उत्तर दिया कि इन सब स्वप्नों का फल यह है कि तुमारे उदरसे तीनलोककेनाथ तीर्थंकरपुत्रका जन्म होगा.। उस दिन सौधर्म इंद्रने प्रथम ही श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि, लक्ष्मी इन ६ देवियोंको माताके निकट भेजा। उन्होंने माताके उदरकी संशोधना कियी, जिससे माताका उदर फटिकसमान निर्मल हो गया। उसी दिन अषाढ सुदी ६ उत्तरा नक्षत्रमें भगवानका जीव अच्युत स्वर्गसे चय कर माताके गर्भमें आ गया। जिस समय भगवान् माताके गर्भमें पधारे, उस समय कल्पवासी देवोंके घरमें अपने आप घंटानाद होने लगा, ज्योतिषी देवोंके यहां सिंहनाद हुआ, भवनवासी देवोंके घर शंखनाद हुवा, व्यंतरदेवोके घर भेरी बजने लगी और स्वर्गपति सौधर्म इंद्रका आसन कंपायमान हुआ, जिससे समस्त देवोंने अपने अवधिज्ञानसे जानलिया कि आज अंतिम तीर्थंकर भगवान अपनी माताके गर्भमें पधारे हैं। उसी वक्त समस्त देवोंसहित इंद्रदेव सिद्धार्थमहाराजके घर जाकर बड़े ठाठसे भगवानके मातापिताका अभिषेक किया और गर्भस्थ प्रभुकी नानाप्रकारसे स्तुति की। तत्पश्चात् रुचिकद्वीपमें रहनेवाली ५६ कुमारिकावोंको (देवियोंको) बुलाकर माताकी सेवामें तैनात कर दी। इसप्रकार गर्भोत्सवपूर्वक नमस्कार करके सब देव अपने २ स्थान चले गये। जिसप्रकार कमल जलसे अलिप्त रहता हैं उसप्रकार भगवान नव मासपर्यंत माताके गर्भमें रहे। माताके

उदरकी त्रिवलीका कभी भंग नहिं हुवा। छप्पन कुमारिकाय माताकी हरतरहसे सेवा करती रही। कभी २ मातासे अनेक प्रकारके गूढ़ प्रश्न भी किया करती थीं सो माता भी सबको यथोचित उत्तर प्रदानकर सबको प्रसन्न कर देती थी।

जन्मकल्याण।

तत्पश्चात् माताके ९ मास पूर्ण हुये. तब चैत्रशुक्ला १३ उत्तरा नक्षत्रके दिन महावीरस्वामीका जन्म हुआ। सर्वत्र जयजयकार होने लगा, स्वर्गमें घंटानाद हुआ, ज्योतिषीदेवोंमें सिंहनाद सुनाई पड़ा, भुवनवासी देवोंमें शंखनाद और व्यंतर देवोंमें भेरी बजने लगी। जिससे समस्तदेवोंको भगवानके जन्म होनेकी सूचना होगई, तब सौधर्म इंद्र चारोंप्रकारके देवों सहित जन्मकल्याणक महोत्सव करनेकेलिये एक मायामयी ऐरावत हस्ती लेकर कुंडलपुर आया। इंद्राणी माताके प्रसूति-घरमें गई और माताको सुखनिद्रामें शयन कराके एक देवको मायासे छोटासा बच्चा बनाकर माताके पास सुला दिया और भगवानको उठाकर इंद्रके समीप ऐरावतहस्ती पर लाकर सौंप दिया। इंद्रने भगवानका सुंदररूप देखनेकेलिये हजार नेत्र बनाये तौ भी. उसकी रूपतृष्णा नहीं मिटी। तत्पश्चात् सब देव अपने २ विमान वा वाहनोंपर चढ़कर गाजेबाजे सहित आकाशमार्गसे सुमेरुपर्वतपर पांडुकवनमें लेगये और अर्द्धचंद्राकार पांडुकशिलाके मध्यभागमें रत्नसिंहासनपर भग-

वानको विराजमान किया और पांचवे क्षीरसमुद्रसे १००८ कलश मंगाकर इंद्रने भगवानका जन्माभिषेक उत्सव किया। तत्पश्चात् दिव्य-आभूषण पहनाकर दर्शन किया, स्तुति की। फिर ऐरावतहस्तीपर विठाकर गाजेबाजेसहित कुंडलपुर आये और माताको जगाकर भगवान को समर्पण किया। भगवान-को दिव्य वस्त्राभूषणसहित देखकर माताको अतिशय आनंद व आश्चर्य हुआ। तत्पश्चात् इंद्रने भगवानके मातापिताको देवोपनीत रत्नमय वस्त्रालंकार व पुष्पमाला पहनाकर उनके आगे तांडवनृत्य किया और उत्तमकाव्योंसे स्तुति करके नमस्कार किया। इसप्रकार जन्मकल्याणका उत्सव पूरा करके इंद्र व समस्तदेव अपने २ स्थानपर चले गये।

भगवान् मति[१], श्रुति[२], अवधि[३] ऐसें तीनज्ञान सहित ही उत्पन्न हुये थे। भगवानके हाथके अंगूठेमें अमृतरस होनेके कारण भगवान् उसी अमृतरसको चूसते रहते थे। माताके स्तन्यपान करने की आवश्यक्ता नहीं होती थी। भगवानको समस्त वस्त्रालंकार स्वर्गके देव ला ला कुर नित्य नये२ पहनाते थे और अनेक देव भगवानके बराबर बालकका शरीर बनाकर खेलते थे।

१। इंद्रिय और मनसे समस्तपदार्थोंके जाननेका नाम मतिज्ञान है।२। उससे विशेष अर्थात् अर्थसे अर्थांतर जाननेका नाम श्रुतज्ञान है।३। और कितने ही क्षेत्रकी मर्यादा लिये रूपी पदार्थोंका जानना सो अवधिज्ञान है।

उनके अलौकिक खेल देखकर माता वगेरहको अद्भुत आनंद होता था। भगवान् चंद्रमाकी तरह दिनोंदिन बढ़ने लगे। आठवें वर्ष भगवानने श्रावकके अहिंसा, सत्य, अचौर्य, कुशील-त्यागादि बारह व्रत ग्रहण किये।

एक दिन भगवान् उन मायामयी समवयस्क बालक देवोंके साथ बागमें क्रीड़ा करनेको गये, तो देवगण एक माया-मयी हस्ती बनाकर प्रभुके सन्मुख लाये। उसको देखकर सब जने भयभीत हुये, इधर उधर भागने लगे, हस्तीके पास कोई भी नहिं जाता था, परंतु भगवान् उसके पास गये और हाथसे पकड़कर उस पर चढ़ बैठे। उसे देखकर कुटुंबके सब लोगोंको बड़ा आनंद व आश्चर्य हुवा। तुमारी बराबरी कोई भी बलवान्, पराक्रमी, धैर्यवान् नहिं होगा इत्यादि प्रशंसा करने लगे। तत्पश्चात् भगवानने युवावस्था व माता पिताका अत्याग्रह होने पर भी विवाह नहिं किया। बालब्रह्मचारी ही बने रहे। जब भगवानको तीसवें वर्ष क्षायिक सम्यकत्व प्राप्त हुआ, तब मनमें वैराग्य उत्पन्न हुआ और द्वादश अनुप्रेक्षावोंका चिंतवन करने लगे।

तपःकल्याण।

महावीरस्वामीको जब वैराग्य उत्पन्न होकर द्वादशभाव-नावोंका चिंतवन होने लगा, तब पांचवे ब्रह्मस्वर्गके लोकांतिक देव आये और भगवानको तीन प्रदक्षणा देकर नमस्कार किया। भगवानके वैराग्य भावनाकी स्तुति करके प्रार्थना की कि–

" प्रभो ! आपने जो दीक्षा ग्रहण करनेका विचार किया है सो अति प्रशंसनीय है। यह धर्मप्रवृत्तिका कार्य सिवाय आपके और कौन कर सकता है। धन्य है आपकी इस वैराग्यवृत्तिको"! इत्यादि स्तुति व पूजा करके भगवानका वैराग्य दृढ कराकर चले गये। तत्पश्चात् चार प्रकारके देव अपने२ वाहनोंपर चढ़कर कुंडलपुर आये भगवानको अभिषेक कराकर एक नयी अपूर्व रचना किये हुई पालखीमें बिठाकर दीक्षाकेलिये जय जयकार शब्द करते हुये पूर्वदिशाकी ओर नंदन वनमें ले गये। वहां पर चंदनके वृक्ष तलें एक फटिकशिलापर इंद्राणीने नानाप्रकारके रत्नोंके चूर्ण से साथिया पूर्णकर पुष्पमालादिसे मंडप बना रक्खा था। भगवान् पालकीसे उतरकर उसी मंडपमें जा विराजे। उस समय सर्व प्रकार के देव मनुष्य एकत्र हुये थे। अनेक महाशय भगवानकी विभूति वगैरह देखकर कहने लगे कि यदि ऐसी विभूति अपने पास होती, तो अपन तो कदापि दीक्षा नहिं लेते। इसप्रकार परिग्रहपर तीव्रराग करके कर्मबंध (पापोपार्जन) करने लगे। अनेक सज्जन वैराग्य ही समस्त विभूतियोंका मूल कारण है, ऐसा समझ कर अनेक प्रकारके व्रत नियम ग्रहण करने लगे। भगवान ऐसे अल्प वयमें ही दिगंबरी दीक्षा ग्रहण करते हैं, ऐसा सुनकर घरके सब लोग बड़े दुःखित हुये। माता तो अतिशय उदास होकर रोने लगी कि–हे पुत्र, तेरे शरीरपर आजतक अंगनकी धूपतक नहीं पड़ी।

अब दिगंबर होकर कैसे रह सकैगा ? हे बेटे ! तेरा शरीर अतिशय सुकुमार है, संयम तलवारकी धार है। तू घर रहता है तो इंद्रादिक देव आकर हमारे घरकी शोभा बढ़ाते हैं। अब वे क्यों आवेंगे इत्यादि मोहमयी विलाप करने लगी। उसे विलपती देखकर सौधर्म इंद्र समझाने लगा कि—" माताजी, आपका पुत्र जगतका स्वामी है। इस सिंहको किसका भय है ? ये चरमोत्तम शरीरी हैं। इनके शरीरको कौन दुष्ट कष्ट दे सकता है। इन्होंने इस संसारमें अनंतकाल भ्रमण करके नाना प्रकारके दुःख सहन किये हैं अब ये समस्त दुःखों से मुक्त होकर शाश्वत सुखका अनुभव करैंगे और इस दुःखमय संसार समुद्रसें अनेक जीवोंको तारनेवाले हैं इनकी अपनेको चिंता करना भूल है " इस प्रकार सौधर्मेंद्रने माताको सांतवन किया।

तत्पश्चात् भगवानने चौवीस प्रकारके परिग्रहका त्याग करकें सिद्धोंको नमस्कार किया और पांच मुष्टियोंसे शिर व दाढ़ीके बालोंका लुंचन करके पांच महाव्रत और अठाईस मूलगुण धारण किये। इस प्रकार मगसर बदी १० हस्तनक्षत्रमें भगवाननें तीसवें वर्षमें दिगंबरी दिक्षा ग्रहण की। इंद्रने भगवानके केशं उठाकर रत्नमयी पिटारेमें बंद करके समस्त देव और गाजे बाजे सहित पांचवें क्षीर समुद्रमें क्षेपण करनेको ले गये, परंतु मानुषोत्तर पर्वतपर (जोकि २॥ द्वीपकी

सीमा है) केश पिटारेमेंसे छनकर नीचे गिर पड़े क्योंकि-मानुषोत्तरपर्वतसे आगे (अढाई द्वीपसे आगे) मनुष्य वा मनुष्यशरीरके अंशका गमन नहीं है। तत्पश्चात् वहीं पर भगवानकी स्तुतिकर सब देव अपने २ स्थानको चले गये।

इधर भगवान योगधारण करके पर्वतके समान निश्चल हो गये। छह मास पर्यंत एकसा ध्यान किया। उसके प्रभावसे भगवानको चौथा [1]मनःपर्ययज्ञान प्राप्त हुआ। तत्पश्चात् भ्रमण करते २ एक दिन दशपुरनगरमें आये। वहांपर कुल नामका राजा राज्य करता था। उसने भगवानको देखकर यह कोई महात्मा हैं, उत्तमपात्र हैं ऐसा विचारकर उनको नवधाभक्तिपूर्वक पड़गाहना करके भोजनार्थ अपने घरमें ले गया और तीन प्रदक्षणा देकर नमस्कार किया। पादप्रक्षालन पूर्वक पूजन करके दुग्ध और चांवल का आहार प्रदान किया जिससे देवताओंने उसके घरपर पंचाश्चर्य वृष्टि की। भोजनांतर भगवान पुनः वनमें गये और द्वादश प्रकारके तप करने लगे। उनके प्रभावसे भगवानको अष्ट प्रकारकी ऋद्धि और अनेक प्रकारकी सिद्धियां प्राप्त हुईं।

तत्पश्चात् फिरते २ भगवान एक दिन उज्जयनी नगरीके समीप आकार श्मशान भूमिमें पद्मासनसे ध्यान धरकर बैठ

---

१ दूसरेके मनमें तिष्ठते पदार्थोंका ज्ञान लेना सो मनःपर्यय-ज्ञान है।

गये। उस समय सातकीका पुत्र स्थाणु नामका ग्यारहवां रुद्र (अंतिम रुद्र) था, उसने भगवानको देखा। देखते ही उसे पूर्वभव स्मरण हो आये, जन्मांतरमें यह हमारा शत्रु था। ऐसा स्मरण करके भगवान पर नाना प्रकारके उपसर्ग किये। उसने विद्याके प्रभावसे विकाराल स्वरूप बनाया। कभी मोटा भयंकर हो जाता था, कभी रोता, कभी हँसता, कभी गाता था व अपने दाँत बड़े २ बढ़ाकर मुहमेंसे अग्निज्वाला बाहर करता हुवा भगवानको भय दिखाने लगा। भगवान रंच मात्र भी चलायमान नहीं हुये। तत्पश्चात् उसने भयंकर सिंह सर्पका स्वरूप बनाकर खानेको दौड़ा तथा मायामयी भयंकर सेना बनाकर हरतरहसे भगवानको उपसर्ग किया परंतु भगवान जरा भी नहीं डिगे, तब लाचार होकर सब उपद्रव बंदकर दिया और समझ लिया कि ये कोई महात्मा हैं, तब स्तुतिपूर्वक नमस्कार करके चल दिया। इसी प्रकार भगवान्ने भिन्न २ वनोंमें विहार करते २ बारह वर्ष तक अनेक प्रकारके घोर तपश्चरण किये। तत्पश्चात् ४२ वें वर्ष एक दिन जृंभिला ग्रामके निकट वनमें आये। वहांपर एक शालवृक्षके नीचे शिला थी. उसीपर ध्यान धरकर बैठ गये। वहांपर भगवानके तपःप्रभावसे वन समस्त ऋतुओंके फलफूल युक्त होगया। सिंह गाय एक घाट पानी पीने लगे. सब जीवोंने अपना जातीय वैर छोड़कर शांतभाव धारण करलिया।

केवलज्ञानकी प्राप्ति ।

भगवानने उस शिलापर ध्यानके प्रभावसे चार प्रकारके **घातियाकर्मोंकी ६३ प्रकृतियोंको** नाश करके **वैशाख सुदि दशमी** उत्तरा और हस्त नक्षत्रके योगमें **केवलज्ञान** [सर्वज्ञत्व] प्राप्त किया। उस समय नवलब्धिकी प्राप्ति हुई। अनंत चतुष्टय अर्थात् अनंतदर्शन, अनंतज्ञान, अनंतवीर्य, अनंतसुख उत्पन्न हुये। स्वर्गमें इंद्रने अपने अवधिज्ञानसे जानकर कि भगवानको केवलज्ञान प्राप्त हुआ है, आसनसे उठकर सात पैंड चलकर परोक्ष नमस्कार किया और कुबेरको भगवानके धर्मोपदेश श्रवणार्थ समवसरण नामका सभामंडप रचनेका हुकुम दिया। तथा समस्त देवों सहित भगवानके समवसरणमें जाकर भगवानके तीन प्रदक्षणापूर्वक दर्शन करके नमस्कार किया तथा एक हजार आठ नामोंका स्तोत्र रचकर स्तुति की। तत्पश्चात् भगवानकी **दिव्य ध्वनिमें** धर्मोपदेश पदार्थोंका स्वरूप वर्णन होने लगा, परंतु विना गणधरके उस वाणीको धारणपूर्वक कौन विस्तारसे वर्णन कर सके? तब इंद्रने अवधिज्ञानसे जाना कि इन लोगोंमें तौ कोई गणधर होनेलायक है नहीं, किंतु **इंद्रभूति** नामका एक ब्राह्मण पंडित जो कि **गौतम** नामसे प्रसिद्ध है वह जिनधर्मसे विरुद्ध चार वेद, अठारह पुराणादिक समस्त शास्त्रोंका ज्ञाता है। उसको किसी प्रकारसे बहकाकर यहां लाऊं, तो भगवानका दर्शन करते ही वह जैनधर्म धारण करके भगवानका गणधर

बन जायगा। तब इंद्रने एक कठिन श्लोक बनाकर **वृद्ध ब्राह्मणका स्वरूप** धारण किया और जहां गौतम अपने ५०० शिष्योंको पढ़ा रहा था वहांपर गया और बोला कि—"मैं श्रीवर्द्धमानस्वामीका शिष्य हूं। वे एक श्लोक मुझे बताकर तत्काल ही ध्यानमें बैठ गये, मुझे इस श्लोकका अर्थ तक नहीं बताया, लाचार! आपका नाम सुनकर आया हूं सो आप इसका अर्थ बताइये"।

गौतमने कहा कि—हम तुम्हारे श्लोकका अर्थ तो बता देंगे, परंतु तुमको हमारा शिष्यत्व धारण करना होगा। इंद्रने कहा कि—'तथास्तु' उस समय गौतमके पांचसौ शिष्योंमेंसे सबकी तरफसे एक शिष्य बोल उठा कि हम भी एक श्लोक देंगे उसका अर्थ यदि तुम कर दोगे तो हम पांचसौ जने तुम्हारे शिष्य हो जांयगे। इंद्रने कहा कि यदि मेरेमें इतनी बुद्धि होती तो मैं इस श्लोकका अर्थ पूछनेको यहां क्यों आता! तत्पश्चात् गौतमने अपने शिष्यको चुप करके इंद्रसे कहा कि वह श्लोक तो सुनावो कि कैसा है। तब इंद्रने नीचे लिखा श्लोक[१] पढ़कर सुनाया—

त्रैकाल्यं द्रव्यषट्कं सकलगतिगणा सत्पदार्था नवैव
विश्वं पंचास्तिकायव्रतसमितिविदः सप्ततत्त्वानि धर्मः।

---

१ यह श्लोक इतिहास लिखनेवालेका है. इंद्रने इसी अभिप्रायका और कहा था।

सिद्धेर्मार्गस्वरूपं विधिजनितफलं जीवषट्कायलेश्याः
एतान्यः श्रद्दधाति जिनवचनरतो मुक्तिगामी स भव्यः ॥१॥

इस श्लोकको सुनकर इंद्रभूति (गौतम) बड़े विचारमें पड़ गये। तीन काल कौनसे, षट्द्रव्य नवपदार्थ कौनसे है ये सब किस ग्रंथमें हैं इत्यादि कुछ भी निर्णय नहीं कर सके। यदि झूठमूठ ही कोई अर्थ बनाकर कहदूंगा तो महावीरस्वामी सर्वज्ञ है उनके सामने मेरी पोल खुल जायगी। इस ब्राह्मणसे वाद करनेमें भी कोई लाभ नहीं क्योंकि इसके साथ वादमें यदि हार गया तो बड़ी भारी हंसी होगी—अपमान होगा। इससे तो महावीरस्वामीके पास जाना ही ठीक है, वह पुरुषोत्तम है। उसके पास जानेमें कोई हानि भी नहीं है उनके पास यदि हारजाऊंगा तो भी कुछ अपमान नहीं होगा। ऐसा विचार करके इंद्रसे बोले कि—"चल, तेरे गुरुके पास ही इसका अर्थ कहूंगा" इंद्र तो यह चाहता ही था कि यह किसी प्रकार भगवानके **समवसरनमें** चले। तत्पश्चात् गौतम अपने पांचसौ शिष्यों तथा अपने वायुभूत और अग्निभूति नामके दोनों विद्वान भ्रातासहित महावीरस्वामीके समवसरणमें जानेको तैयार होगया। इसके दोनों भ्राता भी बड़े विद्वान् और प्रत्येकके पांचपांचसौ शिष्य थे। समवशरणके पास जाते ही दरवाजेपर **मानस्तंभको** देखा, उसके देखते ही उन सबका मान नष्ट होगया, तब नम्रता धारणपूर्वक समवसरणमें

जाकर समवसरनकी विभूति और भगवानको देखनेसे तो उनके मिथ्याविचार नष्ट होगये। भक्तिसे गद्गदकंठ होकर भगवानको तीन प्रदक्षणा देकर नमस्कार किया और १००८ नामोंसे स्तुति करके २मनुष्यसभामें जाकर सबके सब बैठ गये। तत्पश्चात् भगवानसे इंद्रभूतिने प्रार्थना की कि, महाराज! अब आपके मुखसे धर्मोपदेश होना चाहिये। जीवतत्त्वका लक्षण क्या हैं. उसके गुणपर्याय कौन २ हैं, संसार क्या है, मोक्षका स्वरूप क्या है ये सब कृपा कर कहिये।

तत्पश्चात् सर्वज्ञ केवलीभगवान् **महावीरस्वामीकी दिव्यध्वनिमें** तत्त्वनिरूपण होने लगे। प्रथम ही **सप्तभंगी** न्यायका वर्णन हुआ तत्पश्चात्, जीव, अजीव, आस्त्रव, बंध, संवर, निर्जरा और मोक्ष इन **सप्ततत्त्व, नवपदार्थ, पंचास्तिकाय**

---

२ भगवानके समवशरणमें १२ सभा होती है। बीचमें तीन कट्टनीदार बहुत ऊंची एक वेदी होती है उसपर एक रत्नमयी सिंहासन होता है, उसपर भगवान अधर विराजमान होते हैं। भगवानका मुख पूर्वदिशाको होता हैं परंतु अतिशयके प्रभावसे चारोंओर चार मुखवाले दिसते हैं उस बेदीके चारों ओर १२ सभा होती है। चार सभामें चार प्रकारके देव। चारमें चार प्रकारकी देवांगना। एकमें मुनि, एकमें मनुष्य, एकमें आर्जिका और स्त्रियें और एकमें सर्वप्रकारके पशु पक्षी आदि तिर्यंचजीव बैठते हैं।

प्रभृतिका सविस्तर वर्णन हुआ । तत्पश्चात् महावीरस्वामीने गौतमसे कहा कि **मोक्षका प्रधानकारण सम्यक्त्व** है। वह सम्यक्त्व आज्ञा १ मार्ग २ उपदेश ३ सूत्र ४ बीर्य ५ संक्षेप ६ विस्तार ७ अर्थ ८ अवगाढ ९ और परमावगाढ १० ऐसे दशप्रकारका है इन सबका भिन्न २ वर्णन करके गृहस्थधर्म और मुनिधर्मका वर्णन किया। उसको सुनते ही गौतमादिको वैराग्य उत्पन्न हो गया। तत्काल ही दोनों भ्राता और ५०० शिष्योंसहित दिगंबरी दीक्षा धारण कर जैनसाधु हो गये। **गौतमको** (इंद्रभूतिको) उसीदिन **अवधिज्ञान** और **मनःपर्ययज्ञानकी** प्राप्ति हुई और भगवानके प्रथम गणधर होकर द्वादशांगवाणीकी रचना की। तत्पश्चात् इंद्रने भगवानको नमस्कार करके प्रार्थना कियी कि आप अब इस आर्यखंडमें सर्वत्र विहार करके धर्मामृतकी वर्षा करें। तब भगवानने धर्मोपदेश करनेकेलिये विहार किया। कुवेर समवसरणकी रचनाको वहांसे विलय करके भगवानने जहां २ उपदेश किया उसी २ जगह समवसरणसभाकी रचना करता रहा। भगवान् जहां २ जाते थे सौ सौ योजनेमें दुर्भिक्ष नष्ट होजाता था, समस्तजीव वैरभाव रहित होकर शांतिसे कालयापन करते थे।

एक समय विहार करते २ मगधप्रदेशकी (विहार प्रांतकी) प्रसिद्ध **राजगृही नगरी** के सन्निकट विपुलाचल पर्वतपर भगवान का समवसरण स्थापित हुआ, जिसके प्रभावसे वनमें

समस्त वृक्षलतायें छहों ऋतुओंके फलपुष्प सहित सुंदर होगये। वनपालकने समस्त ऋतुओंके अपूर्व २ फलपुष्प संग्रह करके राजगृही नगरीके अधिपति **श्रेणिक महाराजके** सन्मुख भेट किये। राजाने बिना ऋतुके फलपुष्प देखकर आश्चर्यसे मालीको पूछा कि–ये विना ऋतुके फलफूल कहांसे लाया! मालीने हाथ जोड़कर निवेदन किया कि–महाभाग! आपके पुण्य प्रतापसे विपुलाचल पर्वतपर त्रिभुवनपति **महावीर स्वामीका समवसरण** आया है, उसके ही प्रभावसे समस्त वन फलफूलयुक्त हो गया है। व्याघ्र और गौ एकघाट पानी पीकर प्रेमके साथ परस्पर चाट रहे हैं। सिंह और हाथी एक साथ खेलते हैं। हंस और बिलाव एकत्र होकर नाचते कूदते हैं। सर्प और न्योले परस्पर आलिंगन कर रहे हैं। इत्यादि वृत्तांत सुननेसे श्रेणीक महाराजको बड़ा आनंद हुआ, सिंहासनसे उठकर पर्वतकी ओर ७ पैंड चलकर **परोक्ष नमस्कार** किया और शहर भरमें आनंद भेरी दिलाकर भगवानके दर्शनपूजनार्थ सबको अपना साथी बनाया। हाथीपर चढ़कर बड़े गाजेवाजे सहित पर्वतपर गया। मानस्तंभको देखते ही हाथीसे उतर छत्रचमरादि राजचिह्न छोड़कर पैदल ही समवसरनकी ओर बढ़ गया। समवसरनमें जाकर तीन प्रदक्षणापूर्वक भगवानको नमस्कार किया और स्तुतिकरके मनुष्यसभामें जा बैठा। भगवानकी दिव्यध्वनिमें धर्मोपदेश सुननेके पश्चात्

श्रेणिकने गौतम गणधरको प्रश्न किया कि भगवन्, मैं पूर्वमें कौन२ गतिमें गया, अब कौनसे पुण्यसे राजा हुआ और आपके शासनमें आया; आगेको मेरा क्या हाल होगा इत्यादि सब कहिये। भगवान् गणधरने श्रेणिकराजाके पूर्वजन्मके समस्त वृत्तांत वर्णन करके इस जन्मका तथा भविष्यतमें तुम प्रथम नरकमें ८४००० वर्षपर्यंत दुःखभोगकर अगली चौवीसीमें पद्मनाभिनामके प्रथम तीर्थंकर होवोगे। ये सब वृत्तांत सुनकर श्रेणिकको बड़ा आनंद हुआ तथा उसके भवांतर सुननेसे अन्य हजारों मनुष्योंको सम्यक्त्वकी प्राप्ति हुई और वैराग्य होनेसे जैनेंद्री दीक्षामें दीक्षित हुये। अनेक गृहस्थोंने गृहस्थके १२ व्रतग्रहण किये। इसप्रकार ३० वर्षतक धर्मोपदेश करते रहे।

महावीरस्वामीके समवसरणमें इंद्रभूति, वायुभूति, अग्निभूति आदि ११ गणधर थे। इसके सिवाय ९,९०० मुनि, ३०० अंगपूर्वधारी, १३०० अवधिज्ञानी, ९०० ऋद्धिविक्रियायुक्त, ५०० चारज्ञानके धारी, ७०० कालज्ञानी, ९०० अनुत्तरवादी सब मिलकर १४००० मुनि और ३६००० अर्जिकायें थीं। ये सब भगवान् के साथही विहार करते थे। इनके सिवाय एकलाख श्रावक, तीन लाख श्राविकायें और असंख्य देवदेवांगना आदि धर्मोपदेश श्रवण किया करते थे। जिससे भारतवर्षमें सब जगह प्राय: जैनधर्मका ही प्रचार होगया था तथापि जहां तहां बौद्धादि अनेक मतावलंबी अपने२ विषयरागपोषक

कर रहे हैं। सो यह विषय प्रवृत्ति इस कालमें दुर्निवार है। जिसका भवितव्य अच्छा है वही वीर पुरुष इस महावीरस्वामीके पवित्र अहिंसामय **सनातन जैन धर्मको** धारण कर सकता है। जो लोग अहोरात्र विषयतृष्णाकी तृप्ति करनेमें ही लगे रहते हैं, मत्स्यमांसमदिरा ही जिनका भोजनपान है, वे इस धर्मको धारण करना तो दूर रहा, स्पर्श भी नहीं कर सकते।

भगवानका मोक्षगमन।

भगवान् उपर्युक्त प्रकारसे उपदेश करते २ वहत्तरवें वर्ष जब कि मोक्षहोनेमें एक मास बाकी रह गया था बिहारप्रांतके [1]पावापुर नामक स्थानपर पधारे। **पावापुरके वनमें** एक सरोवर था उसके बीचमें एक ऊंचा टीला था। उसपर एक जगह बैठकर **शुक्लध्यानका** प्रारंभ किया जिसके योगसे शेष रही ८५ कर्म प्रकृतियोंका सर्वथा नाश करके **कार्तिक** कृष्ण **१४ की रात्रिके** शेष और **अमावस्याके** प्रभात ही स्वाति-

---

१ इस समय यह स्थान विहार स्टेशनसे ७ मील हैं। एक बड़े भारी तलावके बीचमें जहां कि टीला था उसपर महावीरस्वामीका सुंदर मंदिर है, वहांपर निर्वाणभूमिके चिन्ह स्वरूप महावीरस्वामीकी चरणपादुका हैं। प्रति वर्ष हजारों जैनी यात्राके लिये जाते हैं और दिवालीके दिन निर्वाणोत्सव यात्राकामेला भी बड़ी धूमधामके साथ होता है।

कर रहे हैं। सो यह विषय प्रवृत्ति इस कालमें दुर्निवार है। जिसका भवितव्य अच्छा है वही वीर पुरुष इस महावीर-स्वामीके पवित्र अहिंसामय **सनातन जैन धर्म**को धारण कर सकता है। जो लोग अहोरात्र विषयतृष्णाकी तृप्ति करनेमें ही लगे रहते हैं, मत्स्यमांसमदिरा ही जिनका भोजनपान है, वे इस धर्मको धारण करना तो दूर रहा, स्पर्श भी नहीं कर सकते।

भगवानका मोक्षगमन।

भगवान् उपर्युक्त प्रकारसे उपदेश करते २ बहत्तरवें वर्ष जब कि मोक्षहोनेमें एक मास बाकी रह गया था विहारप्रांतके [1]पावापुर नामक स्थानपर पधारे। **पावापुरके बनमें** एक सरोवर था उसके बीचमें एक ऊंचा टीला था। उसपर एक जगह बैठकर शुक्लध्यानका प्रारंभ किया जिसके योगसे शेष रही ८५ कर्म प्रकृतियोंका सर्वथा नाश करके **कार्तिक कृष्ण १४ की रात्रिके** शेष और **अमावस्याके** प्रभात ही स्वाति-

---

१ इस समय यह स्थान विहार स्टेशनसे ७ मील है। एक बड़े भारी तलावके बीचमें जहां कि टीला था उसपर महावीरस्वामीका सुंदर मंदिर है, वहींपर निर्वाणभूमिके चिन्ह स्वरूप महावीरस्वामीकी चरणपादुका हैं। प्रति वर्ष हजारों जैनी यात्राके लिये जाते हैं और दिवालीके दिन निर्वाणोत्सव यात्राकामेला भी बड़ी धूमधामके साथ होता है।

नक्षत्रमें भगवान् नश्वरमनुष्यशरीरको छोड़कर ७२ वें वर्षमें निर्वाणको (लोकशिखरपर जहां सब मुक्तजीव विराजते हैं) प्राप्त हो गये । भगवानका शरीर नख केशको छोड़कर सब कपूर की तरह उड़ गया । इंद्रने समस्त देवों सहित आकर भगवानका एक मायामयी शरीर रचा और उसमें नख केश लगाकर चंदनादि दिव्य पदार्थोंमें रख कर अग्नि कुमारके नमस्कार करते समय उनके मुकुटसे उत्पन्न हुई अग्निसे भगवानके शरीरका संस्कार किया । इस प्रकार निर्वाणोत्सव करके सब देव अपने २ स्थान चले गये । जिस समय भगवानको निर्वाण प्राप्ति हुई थी, ठीक उसी समय गौतम-गणधर महाराजको केवलज्ञानकी प्राप्ति हुई थी, उस समय अमावस्याकी कुछ अंधेरी रात्रि बाकी थी सो देवोंने तो रत्न-मय दीपक जलाये थे और मनुष्योंने घृत कपूर तैलादिके दीपक जलाकर अपने २ घरमें केवलज्ञान और मोक्षलक्ष्मीका पूजन किया था, उसी दिनसे प्रति वर्ष महावीर निर्वाण-स्मृतिके लिये यह दीवालीपर्व सर्वत्र मनाया जाने लगा । इस दिन मुक्तिरूपी लक्ष्मीका अर्थात् महावीरस्वामीका तथा निर्वाणभूमियोंकी ही पूजा होती रही । परंतु कुछकालके पश्चात् अनेक विद्वानोंको यह सर्वव्यापी महावीरनिर्वाणस्मृतिका दीवाली त्योंहार मनाना खटकने लगा सो वेदादि ग्रंथोंमें इसका अन्यथा वि-धान करके लोगोंको एक लक्ष्मीदेवीकी कल्पना बताकर उसकी

पूजामें लगा दिया। परंतु सब जगहसे यह प्रवृत्ति नहीं उठी है। दक्षणप्रांत गुजरातप्रांतमें तो पंचांगोंमें भी इसी दीपावलीसे नया वर्ष प्रारंभ किया जाता है। पंचांगोंमें पहिले वीरनिर्वाणसंवत् लिखा जाता था. परंतु अब उसको छोड़कर विक्रमसंवत् लिखने लगे तथापि नवीनसंवत् कार्तिकसुदी १ से ही प्रारंभ करते हैं। नयी वहियां इसी दिनसे ही प्रारंभ करके नये वर्षका कारबार चलाते हैं। इसलिये सबको चाहिये कि इस दीवालीका सच्चा इतिहास इसीप्रकार निश्चय करके नयी वहियोंमें वीरनिर्वाण संवत् सागर लिखना आरंभ करें और इस पवित्र दिनमें दान धर्मादि उत्तम कार्य ही करें. जूआ खेलने आदिसे इस पवित्र त्योंहारको दिवालिया त्योंहार न बनावें। अब हम जूएका एक छप्पय लिखकर इस चरित्रको पूर्ण करते हैं।

छप्पय।

सकलपापसंकेत, आपदाहेत कुलच्छन।
कलहखेत दारिद्रदेत, दीसत निजअच्छन॥
गुनसमेत जससेत, केत रवि रोकत जैसे।
औगुन-निकर-निकेत, लेत लख बुधजन ऐसे॥
जूआ समान इह लोकमें, आज अनीत न पेखिये।
इस बिसनरायके खेलको, कौतुक हू नहिं देखिये॥१॥

णिव्वुइकंडं ।

(निर्वाणकाण्ड गाथा ।)

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्जजिणणाहो ।
उज्जंते णेमिजिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ॥१॥
वीसं तु जिणवरिंदा अमरासुरवंदिदा धुदकिलेसा ।
सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥२॥
वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवरणयरे ।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥४॥
णेमिसामि पज्जण्णो संवुकुमारो तहेव अणिरुद्धो ।
वाहत्तरिकोडीओ उज्जते सत्तसया सिद्धा ॥४॥
रामसुवा वेण्णि जणा लाडणरिंदाण पंचकोडीओ ।
पावागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥५॥
पंडुसुआ तिण्णिजणा दविडणरिंदाण अट्ठकोडीओ ।
सेत्तंजयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥६॥
संते जे वलभद्दा जदुवणरिंदाण अट्ठकोडीओ ।
गजपंथे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥७॥
रामहणू सुग्गीओ गवयगवाक्खो य णीलमहणीलो ।
णवणवदीकोडीओ तुंगीगिरिणिव्वुदे वंदे ॥८॥
णंगाणंगकुमारा कोडीपंचद्धमुणिवरा सहिया ।
सुवणागिरिवरसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥९॥

दहमुहरायस्स सुवा कोडीपंचद्दमुणिवरा सहिया।
रेवाउहयतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१०॥
रेवाणइए तीरे पच्छिमभायम्मि सिद्धवरकूडे।
दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठयकोडिणिव्वुदे वंदे ॥११॥
वडवाणिवरणयरे दक्खिणभायम्मि चूलगिरिसिहरे।
इंदजीदकुंभयणो णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१२॥
पावागिरिवरसिहरे सुवण्णभद्दाइमुणिवरा चउरो।
चलणाणईतडग्गे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१३॥
फलहोडीवरगामे पच्छिमभायम्मि दोणगिरिसिहरे।
गुरुदत्ताइमुणिंदा णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१४॥
णायकुमारमुणिंदो वालि महावालि चेव अज्झेया।
अट्ठावयगिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१५॥
अचलपुरवरणयरे ईसाणे भाए मेढगिरिसिहरे।
आहुट्ठयकोडीओ णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१६॥
वंसत्थलवरणियरे पच्छिमभायम्मि कुंथुगिरिसिहरे।
कुलदेसभूसणमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१७॥
जसरहरायस्स सुआ पंचसयाइं कलिंगदेसम्मि।
कोडिसिलाकोडिमुणी णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१८॥
पासस्स समवसरणे सहिया वरदत्तमुणिवरा पंच।
रिस्सिंदे गिरिसिहरे णिव्वाणगया णमो तेसिं ॥१९॥

अथ अइसयखेत्तकंडं ।

[अतिशयक्षेत्रकाण्डम्]

पासं तह अहिणंदण णायद्दहि मंगलाउरे वंदे ।
अस्सारम्मे पट्टणि मुणिसुव्वओ तहेव वंदामि ॥१॥
बाहूबलि तह वंदमि पोयणपुरहत्थिणापुरं वंदे ।
संती कुंथुव अरिहो वाणारसिए सुपासपासं च ॥२॥
महुराए अहिछित्ते वीरं पासं तहेव वंदामि ।
जंबुमुणिंदो वंदे णिव्वुइपत्तोवि जंबुवणगहणे ॥३॥
पंचकल्लाणठाणइं जाणवि संजादमच्चलोयम्मि ।
मणवयणकायसुद्धी सव्वे सिरसा णमंस्सामि ॥४॥
अग्गलदेवं वंदमि वरणयरे णिवडकुंडली वंदे ।
पासं सिवपुरि वंदमि होलागिरिसंखदेवम्मि ॥५॥
गोमटदेवं वंदमि पंचसयं धणुहदेहउच्चत्तं ।
देवा कुणंति वुट्ठी केसरिकुसुमाण तस्स उवरिम्मि ॥६॥
णिव्वाणठाण जाणिवि अइसयठाणाणि अइसए सहिया ।
संजादमिच्चलोए सव्वे सिरसा णमंस्सामि ॥७॥
जो जण पढइ तियालं णिव्वुइकंडंपि भावसुद्धीए ।
भुंजदि णरसुरसुक्खं पच्छा सो लहइ णिव्वाणं ॥८॥

इति अइसइखित्तकंडं ।

अथ कविवर भैया भगवतीदासजीरचित

निर्वाणकांड भाषा।

दोहा।

वीतराग वंदौं सदा, भावसहित सिरनाय।
कहूं कांड निर्वाणकी, भाषा सुगम बनाय ॥१॥

चौपाई १५ मात्रा।

अष्टापदआदीश्वरस्वामि। वासुपूज्य चंपापुरि नामि। नेमिनाथस्वामी गिरनार। वंदौं भावभगति उरधार ॥२॥ चरम तीर्थंकर चरमशरीर। पावापुरि स्वामी महावीर ॥ शिखरसमेद जिनेसुर बीस। भावसहित वंदौं जगदीस ॥३॥ वरदत्तराय रु इंद मुनिंद। सायरदत्त आदि गुणवृंद ॥ नगरतारवर मुनि १उठकोड़ि। वंदौं भावसहित कर जोड़ी ॥४॥ श्रीगिरनारशिखर विख्यात ॥ कोड़ि वहत्तर अरु सौ सात ॥ संबु प्रदुम्न कुमर द्वै भाय। अनिरुधआदि नमूं तसु पाय ॥५॥ रामचंद्रके सुत द्वै वीर। लाडनरिंद आदि गुणधीर ॥ पांच कोड़ि मुनि मुक्तिमझार। पावागिरि वंदौं निरधार ॥६॥ पांडव तीन द्राविड राजान। आठकोड़ि मुनि मुकति पयान ॥ श्रीशत्रुंजयगिरिके सीस। भावसहित वंदौं निश दीस ॥७॥ जे बलिभद्र

---

१ साढ़े तीन कोड़।

मुकतिमैं गये । आठकोड़ि मुनि औरहिं भये ॥ श्रीगजपंथशिखर सुविशाल । तीनके चरण नमूं तिहुं काल ॥८॥ राम हनू सुग्रीव सुडील । गवगवाख्य नील महानील ॥ कोड़ि निन्याणवै मुक्तिपयान । तुंगीगिरि वंदौं धरि ध्यान ॥९॥ नंग अनंग कुमार सुजान । पंचकोडि अरु अर्धप्रमान ॥ मुक्ति गये सिहुनागिरसीस ते वंदौं त्रिभुवनपति ईस॥१०॥रावणके सुत आदि कुमार । मुक्त गये रेवातट सार॥ कोड़ि पंच अरु लाख पचास। ते वंदौं धरि परम हुलास ॥११॥ रेवानंदी सिद्धवरकूट । पश्चिमदिशा देह जहँ छूट ॥ द्वै चक्री दश कामकुमार । ऊठकोड़ि वंदौं भवपार ॥१२॥ बड़वाणी बडनयर सुचंग । दक्षिण दिश गिरिचूल उतंग ॥ इंद्रजीत अरु कुंभ जु कर्ण । ते वंदौं भवसायरत्तर्ण ॥१३॥ सुवरणभद्रआदि मुनिचार । पावागिरिवर शिखरमझार ॥ चलना नदी तीरके पास । मुक्ति गये वंदौं नित तास ॥१४॥ फलहोड़ी बड़गाम अनूप । पश्चिमदिशा द्रोणगिरिरूप॥ गुरुदत्तादि मुनीसुर जहाँ । मुक्ति गये वंदौं नित तहाँ ॥१५॥ वाल महावाल मुनि दोय । नागकुमार मिले त्रय होय ॥ श्रीअष्टापद मुक्तिमझार। ते वंदौं नित सुरतसँभार॥१६॥ अचलापुरकी दिश ईशान । तहां मेढ़गिरि नाम प्रधान ॥ सादेतीन कोड़ि मुनिराय । तिनके चरन नमूं चित लाय॥१७॥ वंशस्थल वनके ढिग होय । पश्चिमदिशा कुंथुगिरि सोय ॥ कुलभूषण देशभूषण नाम । तिनके चरणनि करूं प्रणाम ॥१८॥

जसरथराजाके सुत कहे। देशकलिंग पांचसौ लहे॥ कोटि शिला मुनि कोटिप्रमान। वंदन करूं जोर जुगपान॥ १९॥ समवसरण श्रीपार्श्वजिनंद। रेसंदीगिरि नयनानंद॥ वरदत्तादि पंच ऋषिराज। ते वंदौं नित धरमजिहाज॥२०॥ तीन लोकके तीरथ जहाँ। नितप्रति वंदन कीजे तहाँ॥ मन वच कायसहित सिरनाय। वंदन करहिं भविक गुणगाय॥२१॥ संवत सतरहसौ इकताल अश्विनसुदि दशमी सुविशाल॥ 'भैया' वंदन करहि त्रिकाल। जय निर्वाणकांड गुणमाल॥२२॥

इति निर्वाणकांड भाषा।

अथ काशीनिवासी बाबू वृंदावनजीकृत

वर्द्धमान (महावीर) जिनपूजा।

स्थापना। मत्तगयंद।

श्रीमत वीर हरैं भवपीर, भरैं सुखसीर अनाकुलताई।
केहरि अंक अरीकरदंक, नये हरिपंकतमौलि सुहाई॥
मैं तुमकौं इत थापतु हौं प्रभु, भक्तिसमेत हिये हरखाई।
हे करुणाधनधारक देव, इहां अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र अत्र अवतर अवतर। संवौषट्। अत्र तिष्ठ तिष्ठ। ठः ठः। अत्र मम सन्निहितो भव भव। वषट्॥

अथाष्टक । छंद अष्टपदी ।

क्षीरोदधिसम शुचि नीर, कंचनभृंग भरौं । प्रभु वेग हरौ भवपीर, यातैं धार करौं ॥ श्रीवीर महा अतिवीर, सनमतिनायक हो । जय वर्द्धमान गुणधीर सनमतिदायक हो ।

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ॥ १ ॥

मलयागिरचंदन सार, केसरसंग घसौं । प्रभु भव आताप निवार, पूजत हिय हुलसौं ॥ श्रीवीर०॥ जयवर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय भवतापविनाशनाय चन्दनं नि०॥

तंदुलसित शशिसम शुद्ध, लीने थारभरी । तसु पुंज धरौं अविरुद्ध, पाऊं शिवनगरी ॥ श्रीवीर० जयवर्द्धमान० ॥३॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् नि०॥३॥

सुरतरुके सुमनसमेत, सुमन सुमनप्यारे । सो मनमथभंजन हेत, पूजूं पद थारे ॥ श्रीवीर० ॥ जयवर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं नि० ॥४॥

रसरज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी । पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी ॥ श्रीवीर० ॥ जयवर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं नि०॥५॥

तमखंडित मंडितनेह, दीपक जोवत हूं । तुम पदतर हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हूं ॥ श्रीवीर० ॥ जयवर्द्धमान० ॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय मोहान्धकारविनाशनाय दीपं नि०॥६॥

हरिचंदन अगर कपूर, चूरि सुगन्ध करे। तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरे॥ श्रीवीर०॥ जयवर्द्धमान०॥

ॐ ह्रीं श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अष्टकर्मविध्वंसनाय धूपं नि०॥७॥

रितुफल कलवर्जित लाय, कंचनथार भरों। शिव फलहित हे जिनराय, तुमढिग भेट धरों॥ श्रीवीर०॥ जयवर्द्धमान०॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं नि०॥ ८॥

जलफल वसु सजि हिमथार, तनमन मोद धरों। गुणगाऊं भवदधितार, पूजत पाप हरों॥श्रीवीर०॥ जयवर्द्धमान०॥९॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं नि०॥९॥

पंचकल्याणक—राग टप्पा

मोहि राखौ हो सरना, श्रीवर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखौ हो सरना॥ टेक॥ गरभ साढ़सित छट्ट लियौ थिति, त्रिशला उर अघहरना। सुर सुरपति तित सेव करत नित, मैं पूजूं भवतरना॥ मोहि राखौ०॥१॥

ॐ ह्रीं आषाढशुक्लषष्ठिदिने गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥१॥

जनम चैत सित तेरसके दिन, कुंडलपुर कनवरना। सुरगिर सुरगुरु पूज रचायौ, मैं पूजूं भवहरना॥ मोहि राखौ०॥

ॐ ह्रीं चैत्रशुक्लत्रयोदशीदिने जन्ममङ्गलप्राप्ताय श्रीमहावीर जिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा॥२॥

मंगशिर असित मनोहर दशमी; ता दिन तप आचरना। नृप कुमारघर पारन कीना, मैं पूजूं तुम चरना। मोहि राखौ हो० ॥३॥

ॐ ह्रीं मार्गशीर्षकृष्णदशम्यां तपोमङ्गलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥३॥

शुक्लदशैं वैशाखदिवस अरि, घात चतुक छय करना। केवल लहि भवि भवसर तारे, जजूं चरन सुख भरना॥ मोहि राखौ० ॥४॥

ॐ ह्रीं वैशाखशुक्लदशम्यां ज्ञानकल्याणप्राप्ताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥४॥

कातिक श्याम अमावस शिवतिय, पावापुरतैं वरना। गनफनिवृंद जजै तित वहु विधि, मैं पूजूं भयहरना॥ मोहि राखौ० ॥५॥

ॐ ह्रीं कार्तिककृष्णामावास्यायां मोक्षमङ्गलमंडिताय श्रीमहावीरजिनेन्द्राय अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ॥५॥

अथ जयमाला।

छंद हरिगीता (२८ मात्रा)।

गनधर असनिधर चक्रधर, हरधर गदाधर वरवदा।
अरु चापधर विद्यासुधर, तिरसूलधर सेवहिं सदा॥
दुखहरन आनँदभरन तारन, तरन चरन रसाल हैं।
सुकुमाल गुन मणिमाल उन्नत, भालकी जयमाल हैं॥१॥

छंद घत्तानंद (३१ मात्रा)

जय त्रिशलानंदन हरिकृतवंदन, जगदानंदनचंद वरं।
भवतापनिकंदन तनमनवंदन, रहितसपंदन नयन धरं॥२॥

छंद तोटक।

जय केवलभानुकलासदनं। भविकोकविकाशन कंजवनं॥
जगजीत महारिपु मोहहरं। रजज्ञानदृगांवरचूरकरं॥ १॥
गर्भादिक मंगल मंडित हो। दुख दारिदको नित खंडित हो।
जगमाहिं तुमी सत पंडित हो। तुम ही भवभावविहंडित हो॥२॥
हरिवंशसरोजनको रवि हो। बलवंत महंत तुमी कवि हो।
लहि केवल धर्मप्रकाश कियो। अवलौं सोई मारग राजति यो॥३॥
पुनि आपतने गुणमाहिं सही। सुर मग्न रहैं जितने सब ही।
तिनकी वनिता गुण गावत हैं। लय ताननिसों मनभावत हैं॥४॥
पुनि नाचत रंग अनेक भरी। तुव भक्तिविषै पग एम धरी।
झननं झननं झननं झननं। सुर लेत तहाँ तननं तननं॥५॥
घननं घननं घनघंट बजैं। दृमदं दृमदं मिरदंग सजैं।
गगनांगणगर्भगता सुगता। ततता ततता अतता वितता॥६॥
धृगतां धृगतां गति बाजत है। सुरताल रसाल जु छाजत है।
सननं सननं सननं नभमें। इकरूप अनेक जु धार भमैं॥७॥
कइ नारि सु बीन बजावतु हैं। तुमरो जस उज्ज्वल गावतु हैं।
करतालविषै करताल धरैं। सुरताल विशाल जु नाद करैं॥८॥
इन आदि अनेक उछाहभरी। सुरभक्ति करैं प्रभुजी तुमरी।

तुमही जगजीवनकेपितु हो । तुमही विनकारनके हितु हो ॥९॥
तुमही सब विघ्न विनाशन हो । तुमही निज आनंदभासन हो ।
तुमही चितचिंतितदायक हो । जगमाहिं तुमी सब लायक हो १०
तुमरे पनमंगलमाहिं सही । जिय उत्तम पुण्य लियौ सब ही ।
हमको तुमरी सरनागत है । तुमरे गुनमैं मन पागत है ॥११॥
प्रभु मो हिय आप सदा वसिये । जबलौं वसुकर्म नहीं नसिये ।
तबलौं तुम ध्यान हिये वरतो । तबलौं श्रुतचिंतन चित्त रतो
तबलौं व्रत चारित चाहत हौं । तबलौं शुभ भाव सुगाहत हौं ।
तबलौं सतसंगति नित्य रहौ । तबलौं मम संजम चित्त गहौ १२
जबलौं नहिं नाश करौं अरिको । शिवनारि वरौं समताधरिको ।
यह द्यो तबलौं हमको जिनजी । हम जाचत हैं इतनी सुनजी

छंद घत्तानंद ।

श्रीवीर जिनेशा नमितसुरेशा, नागनरेशा भगतिभरा ।
'वृंदावन' ध्यावै विघ्न नशावै, वांछित पावै शर्मवरा ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा॥

दोहा ।

श्रीसनमतिके जुगलपद, जो पूजहिं धर प्रीत ।
वृंदावन सो चतुरनर, लहैं मुक्त नवनीत ॥ १६ ॥

इत्याशीर्वादः ।

इति महावीरजिनपूजा समाप्ता ।

"दिगंबर जैन"

हरवर्ष गंजावर सचित्र खास अंक, जैन पंचांग और ८-१० उपहारकी पुस्तकें देनेवाला यदि कीसी भी पत्र जैनोंमे हो तो वह मात्र सुरतसें हिंदी और गुजराती दोनों सम्मीलीत भाषाओंमें प्रकट होता हुवा नियमीत मासिक पत्र "दिगंबर जैन" ही है, जिसका उपहारोंके पोस्टेज सह वार्षिक मुल्य मात्र रु. १--१२--० ही है. पत्र भेजनेसे नमूना मुफ्त भेजा जाता हैं.

मेनेजर, "दिगंबर जैन," चंदावाडी-सुरत.

दिगंबर जैन पुस्तकालय-सुरत.

इस पुस्तकालयमें सब जगहके सब प्रकारके हिंदी और गुजराती भाषाके ग्रंथों हर समय विक्रीके लिये तयार रहते हैं. और मंदिरोंमें वर्तने योग्य 'पवित्र काश्मीरी केशर' १) तोलाके हिसाबसे मिल सकता है, पुस्तकोंका सूचीपत्र मुफ्त भेजा जाता है.

मेनेजर, दिगंबर जैन पुस्तकालय-सुरत.

જાણવા યોગ્ય વર્તમાન.

—આખા હિંદુસ્થાનનું ક્ષેત્રફળ ૧૭૭૩૧૬૮ ચોરસ માઈલનું છે, જેમાં મદ્રાસ પહેલે નંબરે (૧૪૨૪૧૩ ચો. માઈલ), મુંબાઈ બીજે નંબરે ૧૨૩૨૬૨) અને બંગાલ ત્રીજે નંબરે (૧૧૫૮૧૬) આવે છે.

—હિંદુસ્થાનમાં ૧૬ લાખ માણસોનેજ અંગ્રેજી લખતાં વાંચતાં આવડે છે.

—હિંદુસ્થાનનું ઉત્પન્ન રૂ. ૧૨૨ કરોડનું છે, જે ઇંગ્લાંડનાં ઉત્પન્ન કરતાં ત્રીજા ભાગ જેવડું છે.

—યુરોપમાં દર માણસની વાર્ષિક ઉપજ રૂા. ૪૦૦) જેટલી છે. ઈંગ્લાંડમાં રૂા. ૬૦૦)થી૭૦૦) અને હિંદુસ્થાનમાં માત્ર રૂા. ૩૦) ની લગભગ છે.!

—હિંદુસ્થાનનો આયાત વેપાર રૂ. ૧૯૨, કરોડનો છે જ્યારે નિકાશ વેપાર રૂા. ૨૪૮) કરોડનો છે.

—હિંદુસ્થાનમાં ભણેલા માણસોનું પ્રમાણ હજારે ૨૦૬ છે જ્યારે આઓનું પ્રમાણ દર હજારે ૧૬ છે.

—હિંદુસ્થાનમાં ભણેલા માણસો માત્ર દોઢ કરોડ છે.

—હિંદુસ્થાનમાં ૭૪૭ વર્તમાનપત્રો છે.

—હિંદી પ્રજાના પોસ્ટલ સેવીંગ બેંકમાં રૂા. ૧૭ કરોડ રોકાયલા છે, જ્યારે ઈંગ્લાંડની પોસ્ટલ સેવીંગ બેંકમાં રૂા. ૨૨૫ કરોડ છે.

—હિંદુસ્થાનમાં રેલ્વે ૩૩૦૦૦ માઇલ લંબાયલી છે.

—દુનિયામાં સર્વે સમુદ્રોમાં એટલાન્ટીક સમુદ્ર સર્વથી વધુ ખારો છે.

—દિગંબર જૈનો તરફથી હાલમાં માસિક, પાક્ષિક, અઠવાડીક વગેરે ૧૭ પત્રો પ્રકટ થાય છે, જેની ભાષા ગુજરાતી, હિંદી, અંગ્રેજી, મરાઠી, કાનડી, કર્ણાટકી અને ઉર્દુ એમ સાત જાતની છે.